International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 7 Issue 05 Ver. I ||May. 2018 || PP.79-82

निराला' लम्बी कविताओं का कथ्य विष्लेषण

डॉ मनोज कुमार शर्मा
जेनेसिस ग्लोबल स्कूल सेक्टर 132 नोएडा, उत्तर प्रदेश

'राम की शक्ति पूजा' सही अर्थों में 'निराला' की प्रतिनिधि काव्य रचना कही जा सकती है। प्राचीन गाथा–परम्परा में अलौकिक तत्त्वों, लोक विश्वासों तथा अतिरंजनापूर्ण वर्णनों का समावेश रहता है। किन्तु 'राम की शक्ति पूजा' में लम्बी कविता के तनाव, और अन्तहीन अंत, आधुनिक परिवेशगत जटिलताओं, संश्लिष्टताओं के साथ, वाह्य संघर्ष के विभिन्न आयाम और आन्तिरक द्वन्द्व मिलकर इस कविता की रचना–प्रक्रिया को जटिल बनाते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' के संरचनात्मक विश्लेषण में लम्बी कविता के तत्त्वों के आधार पर रचना विधान एवं मूल्य चेतना की दृष्टि से सकारात्मकता के साथ–साथ कुछ कठिनाइयों की ओर ध्यान दिलाना आवश्यक है।

'राम की शक्ति पूजा' में वर्णित राम–रावण की लड़ाई युद्ध के मैदान में तो होती ही है साथ ही साथ कवि के मन में भी यह लड़ाई छिड़ी हुई है। सत्य और असत्य का यह संघर्ष केवल निराला जी के मन में ही नहीं हुआ था बल्कि प्रत्येक मानव के मन में यह संघर्ष होता है। इस दृष्टि से राम सत्य और सात्विक दृष्टि के प्रतीक हैं और रावण असत्य और तामसिक वृत्ति का प्रतीक। मन की विकासात्मक भूमि सत् और असत् या सात्विक और तामसिक वृत्ति के अन्तर्द्वन्द्व को झेलती ही है। सत्य को प्राप्त करने की यह अनिवार्य प्रक्रिया है। निराला यहाँ राम के व्यक्तित्त्व में अपने ही व्यक्तित्त्व का प्रक्षेपण करते हैं। निराला भी राम की भांति अपने जीवन में घोर संघर्ष करते रहे हैं और राम की भांति अन्त में उनका प्राप्तव्य भी उन्हें मिल जाता है।

'राम की शक्ति पूजा' की कथा दो स्थानों से संकलित की गई है। 'देवी भागवत' में रावण–वध के समय राम की शक्ति–आराधना का उल्लेख है। इसमें नीलकमल चढ़ाने की कथा नहीं है। इस मूल स्रोत के अतिरिक्त इस कथा का एक स्रोत और है – 'कृत्तिवास की बंगला रामायण'। उसमें राम–रावण की युद्ध कथा पन्द्रह प्रसंगों में समाप्त की गयी है। यदि दोनों कथानकों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो ज्ञात होगा कि निराला ने कृत्तिवास से बहुत कुछ ग्रहण किया है।

निराला ने अपनी कथा को मनोवैज्ञानिक भूमि पर अधिष्ठित कर दार्षनिक भावना के समावेष द्वारा उसे आधुनिक युग के अनुकूल बनाया है।

कथानकः– आरम्भ में राम–रावण के अनिर्णित समर का अतिषय उदात्त चित्र प्रस्तुत किया गया है। युद्ध का ऐसा यथार्थ और जीवंत दृष्य कदाचित ही किसी काव्य में मिले। हतचेतन राम अपनी वानरी सेना के साथ लौट पड़े। सेना विभिन्न स्थविर दलों की भांति राम के पीछे–पीछे चली। राम के धुनष की प्रत्यंचा ढीली हो गई है। जटामुकुट अस्त–व्यस्त हो उठा है।

सुवेलगिरि पर आकर राम अत्यंत संषयग्रस्त हो उठे। उनमें रावण की जय का भय समा गया। युद्ध के लिए उद्यत उनका मन हार–हार जाता है। हार के इन्हीं क्षणों में उन्हें विदेह उपवन में सीता–मिलन का स्मरण हुआ। यह स्मृतिजन्य मिलन हार के बाद नारी के आंचल में मुँह छिपा लेने का मिलन नहीं है और न सर्वत्र से अपने को हटाकर श्रांगारिक अनुभूतियों में खो जाने का मिलन है। यह प्रेम का रचनात्मक मिलन है जो मन के आवेग और उत्साह को जगाकर क्रियात्मक बना देता है। किंतु उस दिन के युद्ध में अपने दिव्यास्त्रों के खण्डित होने से असफलता की याद में वे पुनः चिंताकुल हो जाते हैं। उन्हें गर्वोन्मत्त रावण का अट्टाहस सुनाई पड़ता है–

''फिर सुना–हँस रहा अट्टहास रावण खल–खल

भावित नयनों से सजल गिरे दो मुक्तादल।'[1]

यह देखकर हनुमान समस्त व्योम को ग्रस लेने के लिए आगे बढ़ते हैं किंतु अपनी माता अंजना के समझाने से वे पुनः सामान्य हो भूमि पर उतर आते हैं। विभीषण राम को युद्ध के लिए उत्साहित करते हैं। वे कहते हैं कि लक्ष्मण, जांबवान, सुग्रीव, अंगद आदि सभी वीर आपके साथ हैं और युद्ध भी वही है फिर असमय ही आपके मन में पराजय का भाव क्यों जागा?

''रघुकुल गौरव लघु हुए जा रहे तुम इस क्षण

तुम फेर रहे हो पीठ हो रहा जब जय रण।''[2]

तब राम उदास भाव से कहते हैं– ''मित्रवर विजय होगी न समर।[3]''

महाषक्ति रावण से आमन्त्रित होकर उसकी रक्षा कर रही है। वे एक महत्त्वपूर्ण नैतिक प्रष्न उठाते हैं कि जिधर अन्याय है उधर ही विजय भी है। अंत में जांबवान की सलाह मानकर वे देवी आराधना का संकल्प करते हैं। इसके पूर्व वे विकल्पात्मक स्थिति में थे। हनुमान देवीदह से एक सौ आठ कमल ले आते हैं। आठ दिन की साधना के बाद देवी उनके परीक्षार्थ एक कमल उठा ले जाती है। यज्ञ के पूर्ण होने के समय इस तरह के आकस्मिक विघ्न से वे अत्यंत पीड़ित हो उठते हैं। तभी उनके मन में विचार आता है कि माता उन्हें 'राजीवनयन' कहकर पुकारा करती थीं। वे देवी को एक आँख देने के लिए प्रस्तुत हो गए। ब्रह्मास्त्र उठाकर ज्यों ही अपनी आँख भेदने के लिए वे तैयार हुए कि भगवती ने उनका हाथ थाम लिया। उनकी साधना से प्रसन्न होकर देवी ने उन्हें वरदान दिया–

''होगी जय, होगी जय, हे पुरूषोत्तम नवीन,

कह महाषक्ति राम के बदन में हुई लीन।''4

यह समापन एक ओर दार्षनिक है तो दूसरी ओर मनोवैज्ञानिक। कहना न होगा कि यह छायावादी पीढ़ी का आत्मषक्ति के प्रति निष्ठा का जयघोष है। अब यहाँ हम 'राम की शक्ति पूजा' का लम्बी कविता के निष्कर्ष पर अध्ययन करेंगे।

'राम की शक्ति पूजा' और लम्बी कविता का रचना विधान

जैसा कि लम्बी कविता के रचना विधान शीर्षक अध्याय में संकेत किया जा चुका है, लम्बी कविता में नाटकीयता, विचार तत्त्व, सृजनात्मक तनाव, प्रदीर्घता, अन्तहीन अन्त, एवं अन्विति तत्त्व मिलकर कविता को रूप प्रदान करते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में इन तत्त्वों का संधान हमारा यहाँ अभिप्रेत है।

लम्बी कविता के रचना विधान में नाटकीयता एक प्रमुख तत्त्व है, और 'राम की शक्ति पूजा' नाटकीय मोड़ों और नाटकीय संवादों से पूर्णतः ओतप्रोत है। इस पूरी लम्बी कविता में नाटकीय छन्दों विधान की शक्ति ऐसी है कि कविता एकदम अभिभूत कर देती है। यहाँ छोटी–छोटी भाव–भंगिमाएँ नाटकीय मोड़ों का अन्दाज देती हैं। इस लम्बी कविता में नाटकीय मोड़ों की कुछ भंगिमाएँ इस प्रकार हैंः–

पहला मोड़ है	–	रवि हुआ अस्तः ज्योति के पत्र पर लिखा अमर रह गया राम–रावण का अपराजेय समर
दूसरा मोड़ है	–	लौटे युग दल। राक्षस–पदतल पृथ्वी टलमल, बिंध महोल्लास से बार–बार आकाष विकल।
तीसरा मोड़ है	–	है अमानिषा; उगलता गगन घन अन्धकार;
चौथा मोड़ है	–	ऐसे क्षण अन्धकार घन में जैसे विद्युत
पाँचवा मोड़ है	–	बैठे मारूति देखते राम चरणाविन्द...
छठा मोड़ है	–	बोली माता–''तुमने रवि को जब लिया निगल''
सातवाँ मोड़ है	–	'राम का विषण्णानन...
आठवाँ मोड़ है	–	बाले रघुमणि – ''मित्रवर विजय होगी न समर,
नवाँ मोड़ है	–	हे पुरूष–सिंह, तुम भी यह शक्ति करो धारण,
दसवाँ मोड़ है	–	धिक जीवन जो पाता ही आया है विरोध
और अन्तिम ग्यारहवाँ मोड़ है	–	होगी जय, होगी जय, हे पुरूषोत्तम नवीन

कविता समर के नाटकीय विवरण से प्रारम्भ होती है और राम की चिन्ता से उनकी सिद्धि तक विभिन्न दृष्यों में विभक्त होकर आगे बढ़ती है। पूरी कविता एक प्रकार से राम और राम की शक्ति के बीच नाटकीय संवाद है और ये सम्वाद दोनों प्रकार के हैं– अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी। 'राम की शक्ति पूजा' में तीन प्रमुख नाटकीय लक्षण हैंः–

(i) ध्वनि संरचना बहुत नियमित है,
(ii) धनाक्षरी ही प्रायः हैं, (जहाँ कहीं उसमें भंग है वहाँ नाटकीय मोड़ ही उपलक्षित हैं)
(iii) तुक संरचना की नियमिति है।

निराला जी ने कविता को सूर्यास्त से आरम्भ करके सुन्दर नाटकीय पृष्ठभूमि दी है साथ ही साथ सुन्दर प्रतीकों का प्रयोग करके इस नाटकीयता को कई गुना बढ़ा दिया है। शाम का समय हताषा, निराषा और थकान को प्रतिबिम्बित करता है। युद्ध–भूमि में राम–रावण का अपराजेय समर और आज सूर्यास्त तक इस समर में लिखा गया अमर–इतिहास, कविता के आरम्भ में ही नाटकीयता को जन्म दे देता हैः–

''रवि हुआ अस्तः ज्योति के पत्र पर लिखा अमर

रह गया राम–रावण का अपराजेय समर''5

कविता में दूसरा नाटकीय मोड़ तब उपस्थित होता है जब रावण की राक्षस सेना, आज युद्धभूमि में मिली सकारात्मक स्थिति से उल्लासित होकर, धरती को रौंदती हुई, पृथ्वी को हिलाती सी, अपने हर्षोल्लास से आकाष को गुँजायमान करते हुए वापस लौट रही है। इस दूसरे नाटकीय मोड़ में पहले दृष्य से विपरीत स्थिति दिखलाई पड़ती हैः–

''लौटे युग दल। राक्षस–पदतल पृथ्वी टलमल

बिंध महोल्लास से बार–बार आकाष विकल''6

कविता का तृतीय दृष्य रहस्यात्मक होने के कारण अत्यधिक नाटकीय हो उठा है। अमावस्या की काली रात्रि और आकाष में निबिड अन्धकार। इस अन्धेरे में दिषाओं का ज्ञान तक नहीं हो पा रहा था। उस शान्त वातावरण में केवल पर्वत के पीछे की ओर स्थित विषाल सागर निर्वाध रूप से गर्जना कर रहा था। पर्वत भी अपने स्थान पर एक ध्यानमग्न योगी की भाँति स्थिर जान पड़ता था। उस समय केवल एक मषाल जल रही थी जो निस्तब्ध वातावरण को और भी गंभीर तथा नाटकीय बना रही थी। पूरा का पूरा वातावरण इस दृष्य में नाटकीय जान पड़ता है–

''है अमानिषा, उगलता गगन घन अंधकार,

खो रहा दिषा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विषाल

भूधर ज्यों ध्यान–मग्न, केवल जलती मषाल''7

जीवन भर संघर्षरत निराला ने मौलिक विचारों को समाज की विसंगतियों से लड़ते हुए कविता के माध्यम से नूतन दिषा दी है। विचारों के टकराहट और अन्तर्विरोधों का जो स्वरूप इस कविता में दृष्टिगत होता है वह स्वयं में अद्वितीय है।

'राम की शक्तिपूजा' लम्बी कविता के रचना विधान में एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व सृजनात्मक तनाव का योगदान है। इस तनाव के द्वारा ही 'राम की शक्ति पूजा' अपनी प्रदीर्घता को प्राप्त करती है। अनुभव या विचार के लगातार दबाब से या किसी बिधायक बिम्ब या रूपक की उपस्थिति से सृजनात्मक तनाव निष्पन्न होता है। 'राम की शक्ति पूजा' में बिम्ब, रूपक, विचार अपनी पूर्ण परिणति को प्राप्त होकर कविता को सृजनात्मक तनाव प्रदान करते हैं और कविता प्रदीर्घ होती चली जाती है।

तुलसीदास

सन 1938 में निराला की सर्वश्रेष्ठ रचना उनकी लम्बी–कविता 'तुलसीदास' प्रकाषित हुई। 'राम की शक्ति पूजा' की तरह 'तुलसीदास' भी आख्यानक काव्य है। इसमें 100 बंधों में 600 पंक्तियाँ हैं। इसमें भी निराला जी ने महाकाव्योचित औदात्य और गांभीर्य उत्पन्न करने का प्रयास किया है। आत्ममन्थन पर केन्द्रित प्रस्तुत रचना 'तुलसीदास' लम्बी–कविता के रचना विधान के आधार पर एक श्रेष्ठ रचना है।

कविता का प्रारम्भ अस्तमित सांस्कृतिक सूर्य के कलात्मक चित्र के साथ होता है। यों पृष्ठभूमि मध्यकालीन भारत की है, जब मुसलमानों के आक्रमण से पराभूत देष श्रीहत हो गया था। विघटित संस्कृति के रूप को कवि ने शब्दों की विषिष्ट संयोजना द्वारा समकालीन देषकाल और वातावरण को देखते हुए परिस्थितिजन्य तनाव युग–बोध, जगह–जगह पर नाटकीय संवाद, छंद की नई बंदिष एवम रूपक की ताजी नियोजना के माध्यम से कविता में ढाला है जो देखते ही बनता है–

'भारत के नभ का प्रभापूर्य

शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य

अस्तमित आज रे– तमस्तूर्यदिग्मंडल,

उर के आसन पर षिरस्त्राण

शासन करते हैं मुसलमान,

है उर्मिल जल, निष्चलत्प्राण पर शतदल।[8]

कथानकः– आरम्भिक दस बंधों में निराला जी ने तुलसीदास के आविर्भावकाल की राजनीतिक दषा का वर्णन किया है। इस्लाम की शक्ति और सभ्यता से समूचा देष आक्रांत और दलित हो चुका है। नैराष्य और निष्क्रियता से देष जड़ बन गया है।

इस भूमिका के पश्चात राजापुर में शास्त्राध्ययन में लीन युवक तुलसी का उल्लेख किया गया है। एक दिन युवक तुलसी मित्रों के संग चित्रकूट यात्रा को निकलते हैं। वे एक ओर गिरिषोभा से मुग्ध होते हैं, तो दूसरी ओर राम के इस

परमधाम की अधोगति पर खिन्न भी होते हैं। तुलसी ध्यानस्थ हो अपने मन को उर्ध्वगामी करते हैं। परन्तु भारत की पतित एवं दरिद्रावस्था का अंधकार उनके अन्तरचक्षुओं के सम्मुख उपस्थित हो जाता है। तुलसीदास देष की अधोगति पर चिंता मग्न होते हैं। वह एक ज्योतिलोक की कल्पना करते हैं जिसमें राम का आदर्ष चरित्र मुक्ति का आलोक बन जीवन का भव्य संदेष देता है। इस संकल्प के साथ ही उन्हें अपनी पत्नी रत्नावली का स्मरण हो उठता है। क्षण भर में ही तुलसी प्रियामोह की अधःभूमि पर उतर आते हैं।

वह पुनः अपने मित्रों के साथ तीर्थदर्षन आदि के पश्चात घर लौटते हैं। यहाँ तुलसी–रत्नावली के प्रेम का वर्णन होता है।

पत्नी के प्रेममोह में ग्रस्त तुलसी एक बार भी अपनी पत्नी को नैहर नहीं जाने देते। रत्नावली के माता–पिता के सब बुलावे टाल देते हैं। एक दिन रत्नावली का भाई, बहन को तुलसीदास की अनुपस्थिति में ले जाता है। अगले ही दिन तुलसीदास पत्नी के पीछे–पीछे ससुराल पहुँच जाते हैं। उनकी पत्नी पति के इस लोकलाज रहित मोह पर दुःखी हो उनकी भर्त्सना करती है। पत्नी के कटु वचनों से प्रबोध पाकर कवि तुलसीदास का संस्कार जाग उठता है। काम–वासना भस्म हो जाती है। वह पत्नी के स्थान पर शारदा के दर्षन करते हैं। भारती की दृष्टि से आकृष्ट हुआ कवि भावलोक की ऊँचाइयों को पार करता आनंद लोक में विचरण करने लगता है। उसे देषकाल का मायावी ज्ञान नहीं रहता। थोड़ी देर में जब देहात्म–बोध जाग्रत होता है तो भी कवि देहबंधनों से ऊपर उठकर विषुद्ध आत्मरूप की स्थिति प्राप्त किए रहता है और जड़ के विरूद्ध चेतन के संघर्ष को छेड़ने के लिए प्रस्तुत हो जाता है। सभी सांसारिक स्वर सुप्त हो जाते हैं, अलौकिक गीत फूटने को होता है। तुलसीदास सब सांसारिक बंधन त्यागकर 'राम' की महिमामहिम मूर्ति अपने अन्तर में स्थापित कर लेते हैं। एक नए आलोक का उदय उनके अन्तस में होता है और वे वीर–राग रामानुगामी बन जाते हैं।

सरोज स्मृति' लम्बी कविता में सृजनात्मक तनाव एवं नाटकीयता के साथ–साथ इसकी रचना में एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व 'विचार तत्त्व' का योगदान है। 'सरोज स्मृति' में कवि द्वारा उठाए गए विचार बिन्दुओं ने हमारे परिवेष, हमारी जीवन पद्धति, हमारी भावना, हमारे विष्वास और अंधविष्वास, हृदय और चिन्तन–मनन की बनी बनाई परिपाटी को निष्चित रूप से हिला दिया है। रूढ़ियों, परम्पराओं, आस्थाओं का खण्डन करते हुए कवि ने नवीन विचारों का मण्डन किया है और समाज देष–परिवेष को सरोज–स्मृति के द्वारा नूतन दिषा दी है।

विचार तत्त्व के साथ ज्यों–ज्यों कविता कठोर यथार्थ के संघर्ष को अपने में समेटती गई कविता का फलक व्यापक होता गया और कविता प्रदीर्घ होती गई। विचार प्रक्रिया में वास्तव में एक प्रकार का प्रवाह होता है क्योंकि किसी भी समस्या पर चिन्तन के समय उससे सम्बन्धित अन्य समस्या भी सामने आती हैं और कविता में तनाव पैदा करती है, जो लम्बी कविता के रचना विधान का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। 'सरोज स्मृति' में समस्याओं और संघर्षें से घिरे हुए कवि की अपनी असहाय परवषता का आत्मस्वीकारोक्ति में कैसा हृदयस्पर्षी चित्र है–

''धन्ये, मैं पिता निरर्थक था

कुछ भी तेरे हित कर न सका

जाना तो अर्थागमोपाय

पर रहा सदा संकुचित काय

लखकर अनर्थ आर्थिक पथ पर

हारता रहा मैं स्वार्थ समर।''9

संदर्भ सूची

1- अनामिका – (पृ0 152)
2- निराला–अनामिका – (पृ0 156)
3- निराला–अनामिका – (पृ0 165)
4- निराला–अनामिका – (पृ0 156)
5- राग–विराग – सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (पृ0 92)
6- राग–विराग – सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (पृ0 92)
7- राग–विराग – सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' (पृ0 94)
8- 'तुलसीदास' – (पृ0 3)
9- सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' – अनामिका, भाग–2 (पृ0 118)